शैली विज्ञान चिन्तन : विविध सन्दर्भ– काव्यभाषा और शैली

डॉ0 अरविन्द कुमार[1]

अभिव्यंजना पद्धति या शैली का माध्यम भाषा है भाषा का मूल आधार शब्द है जिन्हें उपयुक्त रीति से प्रयुक्त करने को कौशल को ही शैली का मूलतत्व समझना चाहिए। जैसे–जैसे कवियों का अनुभव बढ़ता जाता है और उनमें लेखन शक्ति की वृद्धि होने लगती है। वैसे–वैसे उनमें शब्द की कमी और भावों की वृद्धि होने लगती है पौढ़ावस्था में कुछ शब्दों की ही इस प्रकार से योजना होती है कि बहुत से भाव उनमें ध्वनित होने लगते है।

जिस भाषा का प्रयोग सामान्य बोलचाल या दैनिक जीवन में किया जाता है उसे सामान्य भाषा तथा जिसका प्रयोग सर्जनात्मक साहित्य में किया जाता है उसे काव्यभाषा कहते है। काव्यभाषा में 'काव्य' शब्द का अर्थ कविता न होकर साहित्य है अर्थात काव्यभाषा का प्रयोग साहित्य भाषा या साहित्यिक भाषा के अर्थ में हो रहा है जिसमें गद्य भाषा दोनों ही समाहित है।

काव्य शब्द सामान्य प्रयोग में कविता के लिए रुढ़ि सा बन गया है। अतः कभी–कभी 'काव्य भाषा' से 'कविता की भाषा' का भ्रम हो जाता है इसलिए इसे काव्यभाषा न कहकर साहित्यभाषा कहना अधिक समीचीन होता, किन्तु शैलीविज्ञान तथा आलोचना शास्त्र में इस अर्थ 'काव्यभाषा' का प्रयोग इतना अधिक होने लगा है कि उसे छोड़कर एक–दो व्यक्ति यदि 'साहित्यिक भाषा' का प्रयोग करे भी तो उनसे प्रचलित होने की सम्भावना नही है।

काव्यभाषा केवल साहित्य या काव्य की भाषा से नही है और सामान्य भाषा का अर्थ केवल सामान्य बोलचाल नही है कभी–कभी काव्यभाषा में भी सामान्यभाषा का प्रयोग मिलता है। उदाहरण के लिए रामचरित मानस को ''एहि प्रकार भरि माध माघ न हाही, पुन सब निज–निज आश्रम जाही''। वस्तुतः सामान्य भाषा के है इसी प्रकार सामान्य बोलचाल में जब कोई अपने काले कतुले दोस्त मजाक में कहता है कि यार तुम्हे देखकर तो कोयला भी शरमा जाता है, तो य सामान्यभाषा का प्रयोग करता हुआ भी वस्तुतः काव्य भाषा का प्रयोग कर रहा होता है। कहने का आशह यह है कि काव्यभाषा और सामान्य भाषा में अन्तर तो है किन्तु दोनों ही आवश्यकतानुसार एक–दूसरे का प्रयोग करती हैं। सामान्य भाषा, काव्यभाषा भिन्न है और भिन्न्ता का आधार कथन प्रकार है। शैली वैज्ञानिक शब्दावली में कथन प्रकार ही शैली है अतः यह कह सकते है कि सामान्य भाषा और शैली मिलकर पटतन्तुन्याय से काव्यभाषा है। टर्नर का मत है ''काव्यभाषा भाषा का वह विशेष रूप है जो कि सावधानी से रचित, सुसम्पन्न कटा–छटा परिष्कृत और सुबद्ध होता है।'' सामान्यभाषा तथा काव्यभाषा में मुख्य निम्नलिखित अन्तर हैः

[1] सहायक प्रोफेसर– हिन्दी, लालता सिंह राजकीय महिला, स्ना0 महाविद्यालय, अदलहाट, मीरजापुर, उ0 प्र0

1. भाषा को यादृच्छिक ध्वनि प्रतिकों की वह व्यवस्था कहा गया है जिसके आधार पर समाज विशेष के लोग विनिमय करते है यह परिभाषा सामान्य भाषा की है। काव्यभाषा समाज में विचार विनिमय का साधन नही होती। अर्थात सामान्य भाषा तो समाज की सामान्य सम्पत्ति है किन्तु काव्यभाषा पूरे समाज की समपत्ति न होकर माल साहित्यकारों की सम्पत्ति होती है वे ही इनका प्रयोग करते है।
2. सामान्य भाषा को पूरा समाज समझता है, किन्तु काव्यभाषा कों पूरी तरह समाज नही समझ सकता। समाज का एक वर्ग ही उसे भली भाँति समझ पाता है। काव्यभाषा को समझने वालों की संख्या प्रयोक्ताओं की संख्या से अधिक आवश्यक होती हैं
3. सामान्य भाषा मूल या आधार भाषा होती है उसी के आधार पर साहित्य, विचलन–चयन, सामानान्तरता, अप्रस्तुत विधान आदि के सहारें काव्य भाषा का विकास होता है।
4. समान्यभाषा समाज के सहज रूप में विकसीत होती है। वह अदृश्य भाषा होती है। इसके विपरीत काव्यभाषा का विकास कृतिम रुप से साहित्यकार करता है।
5. सामान्यभाषा सभी दृष्टियों से सरल होती है किन्तु काव्य भाषा उसकी तुलना में कठिन होती है। इसलिए वह सर्वसामान्य के लिए बोधगम्य नहीं होती।
6. शब्द या वाक्य का सामान्य भाषा में एक अर्थ होता है। यदि उसमें 'अनेकार्थता' हो तो वह अच्छी नहीं मानी जाती किन्तु कात्यभाषा में अनेकार्थता भी खूब मिलती है तथा वह कात्यभाषा का गुण मानी जाती है।
7. सामान्य भाषा अविधा के स्तर पर अपने भावों को युक्त करती है किन्तु काव्यभाषा प्रायः लक्षण, व्यंजना, और ध्वनि आदि की सहायता लेना अधिक पसन्द करती है।
8. सामान्य भाषा सपाट होती है अतः उसमें कोई आर्कषण नही होता, इसके विपरीत काव्यभाषा सर्जनात्मक होती है तथा विचलन, चयन, समानान्तरता का आधार लेते हुए वह ऐसा स्वरूप धारण करती है, जो बहुत आर्कषण तथा प्रभावशाली होती है।

शब्दों के चयन के साथ–साथ उनके प्रयोगों के ढ़ग पर भी शैली निर्भर करती है। हमारे यहा शब्दों में शक्ति, गुण, वृत्ति ये तीन बाते मानी जाती है। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि शब्द स्वंय खुद भी सामर्थ नही रखते। सार्थक होने पर भी शब्द जब तक वाक्यों में पिरोये नही जाते तब तक न तो उसकी शक्ति ही होती है न उनके गुण ही स्पष्ट होते हैं और वे किसी प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करने में भी समर्थ हो पाते है। उनमें शक्ति या गुण आदि के अंतर्हित रखते हुए भी विशेषता, महत्ता समर्थता या प्रभाव का केवल वाक्यों में सुचारू रूप से उनके सजाये जाने पर ही होता है।

भाषा–विज्ञान के अनुसार भाषा के चार पक्ष माने जाते है।– ध्वनि, शब्दरूप, अर्थ, वाक्य रचना, ध्वनि में माला और वलाघात के तत्व होते है, जिनसे लय और संगीत की सृष्टि होती है। काव्य में ध्वनि के विशेष संयोजन द्वारा ओज, माधुर्य आदि गुणों की सृष्टि की जाती है। शब्द रूपों के विशेष संयोजन द्वारा विभिन्न शब्दालंकारों अनुप्रास, यमक, श्लेष आदि की योजना की जाती है। अर्थ की विशेषता के द्वारा लाक्षाणिक एवं व्यंग्यात्मक प्रयोग, अर्थालंकारों, प्रतीकों एवं विषयों की आयोजना होती है। इसी प्रकार काव्य रचना के वैशिष्ठ के द्वारा काव्य में क्रम सहायता आदि योजना की जाती है। अतः काव्य की

भाषा में विशिष्टता लाने के लिए भाषा के विभिन्न पक्षों ध्वनि, रूप, अर्थ, आदि का प्रयोग विशिष्ट रूप में किया जाता है। भाषा के विशिष्ट तत्वों के आधार पर साहित्य की शैली का निर्माण होता है। उन्हें गुण –प्रतीक अलंकार, विम्ब, वक्रता, प्रतीक आदि का नाम लिया जा सकता है। इन्ही के कारण कवि की शैली में विशिष्ट आर्कषण का संचार होता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भाषा, शैली तात्विक अध्ययन का महत्वपूर्ण आधार है। इसके अभाव में शैली ही नही साहित्य की कल्पना असम्भव है। ह्रदय की संचित अनुभूतियाँ कल्पना का सहारा पाकर भाषा में भी अभिव्यक्ति पाती है।

सन्दर्भ सूची

- डॉ0 नीरजा टण्डन – शैली विज्ञान, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, 1996
- डॉ0 नगेन्द्र–शैली विज्ञान, ने0 प0 हा0, दिल्ली, 1976
- गणपति गुप्त– साहित्य की शैली, भारतेन्दु भवन, 1967, 68
- रविन्द्र नाथ श्रीवास्तव– शैली विज्ञान और आलोचना की भूमिका, केन्द्रीय हिन्दी दिल्ली संस्थान, आगरा, 1972
- आलोचना (त्रैमासिक), राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, जून 1965
- दिनभान (साप्ताहिक), राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 6 जनवरी 1965